दिल्ली उच्च न्यायालयः नई दिल्ली

निर्णय सुरक्षितः 26 नवंबर, 2013
निर्णय उदघोषित : 5 दिसंबर, 2013

रि.या.(सि.) 1582/2013

बाबू राम .....याचिकाकर्ता

द्वारा : श्री पुनीत गोयल अधिवक्ता

बनाम

भूमि और भवन विभाग और अन्य .....प्रत्यर्थीगण

द्वारा : प्रत्यर्थी 3/डीडीए. के लिए सुश्री उर्वी कुठियाला, अधिवक्ता

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति श्री जी.पी. मित्तल

निर्णय

न्या. जी.पी. मित्तल,

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस रिट याचिका के आधार पर, याचिकाकर्ता एक वैकल्पिक भूखंड के आवंटन के लिए अपनी फाइल सं. एफ.30(10)/28/29/89 एल और बी/एल्ट 4425, दिनांक. 06.02.1992 को फिर से शुरू करने का निर्देश करते हुए *परमादेश* की रिट की मांग करता है, जिसे दिनांकित 06.02.1992 के पत्र द्वारा बंद कर दिया गया था।

2. याचिकाकर्ता आगे अपनी अधिग्रहित भूमि के बदले वैकल्पिक भूखंड के आवंटन की मांग करता है। रिट याचिका में किए गए प्रकथनों के अनुसार, कड़कड़डूमा क्षेत्र में स्थित याचिकाकर्ता की 1447 बीघा भूमि को दिल्ली के नियोजित विकास के लिए अधिसूचना सं. एफ.15(III)/59-एल.स.सी., दिनांक 13.11.1959 के द्वारा अधिग्रहण किया गया था। इस संबंध में अधिनिर्णय सं. 54/69-70 दिनांकित. 30.03.1971 को पारित किया गया था। दिल्ली सरकार की नीति के अनुसार, कोई भी व्यक्ति जिसकी 10 एकड़ से अधिक भूमि का अधिग्रहण किया गया है, वह 400 वर्ग गज वाले भूखंड के वैकल्पिक आवंटन के लिए पात्र है।

3. दिनांक 27.04.1989 के एक आवेदन द्वारा, याचिकाकर्ता ने राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार की नीति के अनुसार अधिग्रहित भूमि के बदले भूमि के एक वैकल्पिक भूखंड के आवंटन के लिए आवेदन किया। याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा दिनांकित 03.07.1990 के पत्र के जवाब में दिनांकित 30.07.1990 के पत्र द्वारा *जमा बंदी* की एक प्रति भी प्रस्तुत की गई।

4. याचिकाकर्ता की शिकायत है कि पर्याप्त समय समाप्त होने के बावजूद, याचिकाकर्ता प्रत्यर्थीगण से कोई प्रतिक्रिया प्राप्त करने में विफल रहा और इसलिए, उसने प्रत्यर्थी सं. 1 के कार्यालय में सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत एक आवेदन दायर किया और फिर एक भूखंड के वैकल्पिक

आवंटन के लिए याचिकाकर्ता के आवेदन से संबंधित फाइल की प्रमाणित प्रति अभिप्राप्त करी।

5. याचिकाकर्ता यह जानकर आघात लगा कि उसकी फाइल बंद कर दी गई थी क्योंकि वह (याचिकाकर्ता) दिनांकित. 03.07.1990 और 31.01.1992 का पत्र प्राप्त करने के बावजूद आवश्यक दस्तावेज प्रस्तुत करने में विफल रहा था। यह कहा गया है कि दिनांकित. 31.01.1992 का पत्र याचिकाकर्ता को कभी प्राप्त नहीं हुआ था। आगे यह कहा गया है कि ऐसा प्रतीत होता है कि अभिलेख पर प्रत्यर्थीयों द्वारा अपनी गलतियों को छिपाने के लिए छल किया गया था।

6. प्रत्यर्थीगण द्वारा दायर जवाबी शपथ पत्र में कहा गया है कि दिनांक. 20.07.1990 के पत्र द्वारा याचिकाकर्ता को विभिन्न दस्तावेज जमा करने के लिए कहा गया था, जैसे नमूने के अनुसार *तहसीलदार* द्वारा सत्यापित शपथ पत्र, जमा बंदी, खतौनी, त्याग विलेख, यदि कोई हो आदि। उक्त पत्र के जवाब में, याचिकाकर्ता ने *जमा बंदी* की एक प्रतिलिपि प्रस्तुत करी थी, जो उर्दू में थी। चूंकि *जामा बंदी* उर्दू में थी, इसलिए कर्मचारियों द्वारा इसे समझा नहीं जा सका और इस प्रकार , याचिकाकर्ता को इसकी एक अनुवादित प्रतिलिपि प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था। इसके बाद, प्रत्यर्थी सं.1 ने दिनांकित. 13.01.1992 को एक पत्र द्वारा याचिकाकर्ता को दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए पुनः कहा, ऐसा न करने पर उसका मामला बंद कर दिया जाएगा। बार-बार लिखित अनुरोध के बावजूद, याचिकाकर्ता आवश्यक जानकारी प्रदान करने में विफल रहा। इसलिए

याचिकाकर्ता का मामला बंद कर दिया गया और उसे दिनांकित. 06.02.1992 के एक पत्र के माध्यम से इसके बारे में सूचित किया गया था। याचिकाकर्ता के मामले को बंद करने वाला पत्र विधिवत उनके पते पर दिया गया था और बंद मामले को फिर से खोलने की कोई नीति नहीं है। इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं. 1 ने वर्तमान रिट याचिका को खारिज करने का अनुरोध किया है।

7. शुरुआत में, प्रत्यर्थीगण के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह कहा गया था कि याचिकाकर्ता को लिखे गए दिनांकित. 06.02.1992 के पत्र में लिपिकीय गलती थी, जिसमें दो पत्रों की तारीख दिनांकित.03.07.1990 और 31.01.1992 लिखी गई थी। उन्होंने निवेदन किया है कि वास्तव में याचिकाकर्ता को 03.07.1990 और 13.01.1992 को पत्र लिखे गए थे।

8. याचिकाकर्ता ने स्वयं ही दिनांक.03.07.1990 (अनुलग्नक पी-5), दिनांक. 13.01.1992 (अनुलग्नक पी-7) और दिनांक. 06.02.1992 (अनुलग्नक पी-8) का पत्र अभिलेख पर रखा है, जिसे प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा लिखा गया माना जाता है, जिसके माध्यम से वैकल्पिक भूखंड के आवंटन के लिए याचिकाकर्ता का मामला बंद कर दिया गया था। प्रत्यर्थी सं. 1 के मामले के अनुसार, याचिकाकर्ता से कुछ दस्तावेज मांगने के लिए दिनांक. 03.07.1990 और 13.01.1992 को पत्र लिखे गए थे और ऐसा न करने पर, दिनांक. 06.02.1992 के पत्र द्वारा उनकी फाइल बंद कर दी गई थी।

9. पूरी रिट याचिका में, याचिकाकर्ता द्वारा कहीं भी यह प्रकथन नहीं किया गया है कि दिनांक. 13.01.1992 और 06.02.1992 का पत्र उसके द्वारा प्राप्त नहीं किया गया था। वर्ष 1992 में अपना मामला बंद होने के बाद, याचिकाकर्ता केवल 2012 में तब जागा जब उसने आरटीआई अधिनियम के तहत कुछ आवेदन दायर किए और अपनी शिकायत के निवारण के लिए लोक शिकायत आयोग से संपर्क किया।

10. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी सं.1 ने अब दिनांक 13.01.1992 और 06.02.1992 को पत्र लिखने की झूठी कहानी गढ़ी है।वह इस न्यायालय द्वारा 22 अप्रैल 2013 को निर्णीत लेख राम बनाम भूमि एवं भवन विभाग एवं अन्य, रि.या.(सि) संख्या 2118/2013 में दिए गए निर्णय का हवाला देते हुए आग्रह करते हैं कि वैकल्पिक भूखंड के आवंटन के लिए याचिकाकर्ता के आवेदन पर कार्रवाई करने के लिए समयबद्ध निर्देश जारी किया जा सकता है।

11. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत प्राधिकारी वर्तमान मामले के तथ्यों से आकर्षित नहीं है। उपरोक्त मामले में, याचिकाकर्ता के आवेदन पर कार्रवाई नहीं की गई थी और उसका मामला बंद नहीं किया गया था और वह (उस मामले में याचिकाकर्ता) केवल समयबद्ध तरीके से अपने आवेदन पर कार्रवाई करना चाहता था। मैंने पहले ही ऊपर देखा है कि रिट याचिका पूरी तरह से निशब्द है कि कुछ दस्तावेजों के लिए दिनांक. 13.01.1992 का पत्र और फिर याचिकाकर्ता के मामले को बंद करने वाला दिनांक 06.02.1992 का पत्र उसे प्राप्त

नहीं हुआ था। किसी भी इनकार की अनुपस्थिति में, यह माना जाना चाहिए कि ये पत्र विधिवत प्राप्त हुए थे। हालाँकि यह याचिकाकर्ता का मामला नहीं है कि उसे दिनांक. 13.01.1992 और 06.02.1992 का पत्र प्राप्त नहीं हुआ था, भले ही वह ऐसा ही होता, लेकिन अगर वह बीस साल की लंबी अवधि के बाद इस न्यायालय का दरवाजा खटता है तो उसे राहत नहीं दी जा सकती है।

12. यह सत्य है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 के प्रावधान भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत कार्यवाही पर लागू नहीं होते हैं, लेकिन संबंधित मामलों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि किसी समान कारण के लिए सिविल वाद दायर करने के लिए निर्धारित समय-सीमा के बाद रिट याचिका दायर की जाती है, तो उच्च न्यायालय को विलंब और अतिविलंब के आधार पर याचिका पर विचार न करने का पूरा अधिकार होगा।

13. मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम भाईलाल भाई एवं अन्य, एआईआर 1964 एससी 1006 में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

> *"21. .....विद्वान अधिवक्ता अपने निवेदन में सही है कि परिसीमा अधिनियम के प्रावधान अनुच्छेद 226 के तहत राहत प्रदान करने ऐसे ही लागू नहीं होते हैं। हालाँकि, हमें ऐसा प्रतीत होता है कि विधानमंडल द्वारा निर्धारित अधिकतम अवधि, जिसके भीतर सिविल न्यायालय में किसी मुकदमे में राहत प्राप्त की जानी चाहिए, को सामान्यतः एक उचित मानक माना जा सकता है, जिसके द्वारा अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उपचार प्राप्त करने में होने वाले विलम्ब को मापा जा सकता है। यह न्यायालय विलंब को*

अनुचित मान सकता है, भले ही वह विलंब उपचार के लिए सिविल कार्यवाही हेतु निर्धारित सीमा अवधि से कम हो, किन्तु जहां विलंब इस अवधि से अधिक हो, वहां न्यायालय के लिए यह मानना लगभग हमेशा उचित होगा कि यह अनुचित है....."

14. इसी प्रकार *बांदा विकास प्राधिकरण, बांदा बनाम मोती लाल अग्रवाल और अन्य, (2011) 5 एससीसी 394*, उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि यदि कोई रिट याचिका समान कारण के लिए सिविल वाद दायर करने के लिए निर्धारित सीमा की अवधि से परे दायर की जाती है, तो उच्च न्यायालय को सामान्य मुकदमा से रिट याचिका पर विचार नहीं करना चाहिए। पैरा 17 में, उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः-

"17. यह सच है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत याचिका दायर करने के लिए कोई सीमा निर्धारित नहीं की गई है, परंतु उच्च न्यायालयों द्वारा विकसित स्व-लागू प्रतिबंध के कई नियमों में से एक यह है कि वरिष्ठ न्यायालय लंबे समय के बाद दायर याचिकाओं पर विचार नहीं करेगा क्योंकि यह पक्षकारों के तय/स्पष्ट अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। यदि रिट याचिका समान कारण के लिए सिविल वाद दायर करने के लिए निर्धारित समय सीमा के बाद दायर की जाती है, तो उच्च न्यायालय देरी को अनुचित मानेगा और याचिकाकर्ता की शिकायत पर गुणागुण के आधार पर विचार करने से इंकार कर देगा।

15. वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी और लोक शिकायत आयोग से केवल 2012 में संपर्क किया, अर्थात मामला बंद होने के 20 वर्ष पश्चात ।

16. यह मामला इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा रा.रा.क्षे. दिल्ली सरकार बनाम जगदीश सिंह, 192 (2012) डीएलटी 368 के मामले में दिए गए निर्णय द्वारा स्पष्ट रूप से कवर किया गया है। जिसमें यह दोहराया गया था कि किसी व्यक्ति को कानूनी उपाय प्राप्त करने के लिए उचित समय के भीतर न्यायालय को अनुरोध करना चाहिए। खण्ड पीठ द्वारा न्यायालय से अनुरोध में दस साल की देरी को एक असामान्य देरी बताया गया । जगदीश सिंह मामले में दिए गए फैसले के पैरा 6 और 7 नीचे उद्धृत हैं:-

> *"6. हम इस प्रस्तुती में बल मिला हैं। हम यह इंगित कर सकते हैं कि जब प्रत्यर्थी को दिनांकित 23.2.1999 का अस्वीकृति पत्र प्राप्त हुआ, तो उसने अपने दिनांकित 14.7.1999 पत्र के माध्यम से डीडीए के रुख का खंडन करते हुए यह आरोप लगाया कि उसे पहले आवंटन के लिए कभी कोई पत्र नहीं मिला था।*
>
> *7. अतः, यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रत्यर्थी अज्ञानी था। वे अपने अधिकारों के बारे में जानते था। ऐसी परिस्थितियों में, वर्ष 1999 में अस्वीकृति आदेश प्राप्त करने के बाद, वर्ष 2009 में न्यायालय से अनुरोध करने से पूर्व उनके पास दस साल की असामान्य अवधि तक प्रतीक्षा करने का कोई कारण नहीं था। हमें यह ध्यान रखना होगा कि वैकल्पिक भूखंड के आवंटन की योजना का उद्देश्य उन व्यक्तियों को सहायता देना है जिनकी भूमि का अधिग्रहण किया गया था और इस अभाव पर वे इस शहर में बेघर हो जाते हैं या उन्हें घर की आवश्यकता होती है। ऐसे व्यक्तियों को समय के भीतर उचित आवेदन दायर करना होता है और उनके लिए बिना किसी देरी के कानूनी उपायों का लाभ उठाना भी आवश्यक है। चूँकि हम पाते हैं कि दस वर्ष से अधिक की*

अकथनीय देरी हुई है, इसलिए यह अपीलार्थी की याचिका को अस्वीकार करने के लिए पर्याप्त है।"

17. न्यायालय से अनुरोध करने में बीस वर्षों की इस असामान्य देरी के कारण, तथा वह भी तब जब याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 13.01.1992 और 06.02.1992 के पत्रों की प्राप्ति से स्पष्ट रूप से इनकार नहीं किया गया है, यह न्यायालय रिट याचिका पर विचार नहीं करेगा।

18. तदनुसार रिट याचिका खारिज कर दी जाती है।

(जी.पी. मित्तल)
न्यायाधीश

05 दिसंबर, 2013
वीके

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्झेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*